वारिज व्यथा

जल के बिना कभी रह सकता मित्र कहो जलजात।
पंकज बिना पंक के कैसे खिले यहाँ प्रतिप्रात ।
अमल समीर बिना हो सौरभ का किस बिधि सुप्रसार।
रविकर बस उपलब्ध हमारा करने को उपकार ।। 1 ।।

कभी जहाँ था वास हमारा अब उड़ती है रेत ।
विस्तृत क्षेत्र हमारे निगले दोषी हैं बहु खेत ।
और बचा जो वारि विगंधित कीटों का आवास ।
प्यासे पशु तक नहीं चाहते जाना उसके पास ।। 2 ।।

सलिल मृत्तिका का शुभ संगम कहलाता है पंक।
वह भी नहीं बचा वसुंधा पर हो बैठे हम रंक ।
विषम रसायन भारित कर्दम आर्द्र मरूस्थल मात्र।
जिसमें बढ़ता नहीं मात्र गलता प्राणी का गात्र ।। 3 ।।

कृष्ण वर्ण हो चुका उदक सब उगल रहा है झाग ।
जैसे हर सर में आ बैठा छिपकर कालिय नाग ।
उठते हैं बुलबुले सड़न से निकल रही ज्यों सांस।
जड़ ही जब निष्प्राण दबी है क्या पल्लव की आस ।। 4 ।।

दनुजवृत्ति सम छाई कुम्भी हरा हमारा क्षेत्र ।
जब नीलाभ तोय से अरूणिम श्री से वंचित नेत्र ।
आक्रामक हरीतिमा भी क्या हो सकती है वंद्य ।
आवृत कर निगूढ़ करना वसु क्या जग में अभिनंद्य ।। 5 ।।

कभी हमारे पास तैरते थे शुभ वर्ण मराल ।
स्वच्छ सलिल में देखा करता शफरी की द्रुत चाल ।
चक्रवाक स्वर विकल कभी में सुनता था अलिगान ।
सुधागार सा विमल सरोवर लगता स्वर्ग समान ।। 6 ।।

मषक मक्षिका के समूह अब करता सहन अधीर ।
जीवन पोषक आज घोंटता दम प्राणी का नीर ।
मम सौरभ है पूर्ण पराजित फैली है कटु गंध ।
लुप्त प्राय खग कूजन है बहु मृग धावन स्वच्छन्द ।। 7 ।।

कमल गया अब कुमल भूमि पर पाता विषम प्रसार ।
शतदल नहीं सहस्त्र दलों से भारत भूमि सभार ।
मात्र उछाले जानें में ही कर्दम आज प्रयोज्य ।
शोभा नहीं जड़ें ही मेरी मानव को हैं भोज्य ।। 8 ।।

पाषाणोत्कीर्णित हो भूषित करना मंदिर द्वार।
भावी निज अस्तित्व देखता कमलों का संसार ।
सिंधु सुता चरणों में अर्पित होगें कृत्रिम फूल ।
घ्राणेन्द्रिय वारिज सौरभ सुख जाएगी द्रुत भूल ।। 09 ।।

पूछेंगे भावी शिशु हरिकर धारित कौंन प्रसून।
उत्तर देते क्या न पिता का अन्तर होगा दून ।
क्यां उगते हैं तात मनोहर लाल श्वेत ये पद्म।
जहॉ बनाया है देवों ने रम्य सवैभव सद्म।। 10 ।।

क्या न धरा पर लाया जा सकता यह दिव्य प्रसून ।
क्या भूतल पर इसकी शोभा सौरभ होगा न्यून ।
क्या सौगंधिक कमल भीम ही ला सकते हैं दिव्य ।
अब भी हिमगिरि पर क्या उगते दुर्लभ कुसुम सुनव्य ।। 11 ।।

कुमुद बन्धु कमलेश आदि जो बहु प्रचलित अभिधान ।
खो देगें निज अर्थ यही नर का शशि रवि को दान ।
भ्रमरों को तो हो जाएगें अन्य कुसुम भी लब्ध ।
चक्रवाक पर विकल खोजता घूमेगा विप्रलब्ध ।। 12 ।।

नहीं रोकना बाल वृन्द को यदि वे मेरा चित्र
कौतूहलवश और प्रेम से अंकित करते मित्र
उनके निर्मल उर में रहकर विकसाना हृत्पद्म
अब मेरा है लक्ष्य बहुत देखा जग का छल छद्म ।।13।।

दुर्लभ भी यदि मैं हो जाऊं यह करना उपकार ।
उच्च मूल्य रखकर न डालना तुम भक्तों पर भार ।
वे ही मम अस्तित्व कर रहे इस भूतल पर धन्य ।
श्रीचरणार्पित होने से वर गति जग में क्या अन्य।।14।।

बालक यदि मांगे न मना कर देना यह लो जान
अमलचित्त ही यहां अमलता की करता पहचान
जिनकी दृष्टि अनारत आवृत करके स्थित हिरण्य
क्या विस्मय यदि उन्हें भासती वस्तु मात्र ही पण्य ।।15।।

पुण्डरीक इंदीवर नलिनी कंज कोकनद शब्द ।
ग्रंथो में ही पाए जाते गए दूर वे अब्द ।
राष्ट्र पुष्प कहकर कर देते कागज में ही मान ।
कहाँ खो गया वंश हमारा इसका किसको भान ।।16।।

वारिज वंश विलोपन से क्यों चिंतित होगा भेक ।
उसे अभीष्ट यहाँ पर केवल कृमि कीटक अतिरेक ।
राज्य कुसुम पद पर हो शायद सदा फुली असीन ।
अनुकूलन पटु ही सत्तायुत बर्धनशील प्रवीण ।। 17 ।।

पुन्डरीक इन्दीवर नलिनी और कोकनद मध्य ।
अन्तर कर पाते न आज भी धृत प्रज्ञा अनवद्य।
पाटल के सहस्त्र वर्णों से पटे हुए उद्यान ।
अपनी ही धस्ती पर सहता अब्ज घोर अपमान ।। 18 ।।

मात्र रंग आकार देखता जग न गुणों पर दृष्टि ।
गंधविहीन विपुल कुसुमों की नित नवीन संसृष्टि ।
हमको है संतोष वर्णसंकरता का अभिशाप ।
ढ़ोना पड़ा न हमको यद्यपि निज लय का है ताप ।। 19 ।।

पित्ततात अतिसार हृदय दौर्बल्य गर्भ का पात ।
रोगी के कर दूर मनुज का हरता था बहु ताप ।।
अब इस सेवा का भी अवसर लिया समय ने छीन।
निष्प्रयोज्य प्राणी से बढ़कर कौंन जगत में दीन ।। 20 ।।

जल में रहकर जल से ही जो असंसक्ति की बात ।
तब तक सच थी जब तक जल था नहीं गरल संघात ।
हिम हेमंत हमारे रिपु हैं, अल्प समय के हेतु ।
अब विपदा शाश्वती उठाए रहती है क्षय केतु ।। 21 ।।

कैरव नहीं आज इस युग में बस कैरव ही मान्य ।
कौन पूछता आज वसुज को वसुज हुए सम्मान्य
असम्पृक्तता को तटस्थता माना जाता आज
बहुरंगिता समादृत करता बुद्धयाग्रही समाज ।। 22 ।।

पद्म नहीं अब मात्र पद्मनिधि है मानव को काम्य
नहीं नयन की प्यास तृषा अब मन की है उपशाम्य
मौक्तिक छवि मानस में उठती सुनते नीरज शब्द
और पयोधर शब्द उठाता मात्र वासना अब्द ।।23।।

पद्मालय का आज लोक में अर्थ हुआ है भिन्न
संग्रह में ही निरत मनुज बहु उद्यमशील अखिन्न
मीनाक्षी, कमलाक्षी गत हैं स्वर्णाक्षी हैं प्रेय
धन अर्जन में आज सुकवि तक यहां मानते श्रेय ।।24।।

पुण्डरीक पाया जाएगा कादम्बरि के मध्य।
और पद्मिनी रह जाएगी बस रमणी अनवद्य ।
कहाँ इन्द्र आगे पाएंगे ऐसा आश्रय स्थान ।
भूतल से कुछ ही दशाब्द में होगा मम प्रस्थान ।। 25 ।।

कमलासन से यही निवेदन रखें बीज कुछ गुप्त
पुनः प्ररुढ़ करें पंकज को जब मम अन्वय लुप्त
पद्मालया खोज लें अपने लिए नवीन निवास
भूतल को तो जान रहा नर बस अपना आवास।।26।।

यद्यपि हुआ पंक एकत्रित बहुजन में हृदयस्थ ।
किन्तु वहाँ विकसित न हो सका पंकेरूह शुभ स्वस्थ ।
शुभ वसु अमल अनिल से वंचित, मिला न दिव्य प्रकाश।
सघन तिमिर में क्या सहस्त्र दल पा सकता सुविकास ।। 27 ।।

कुछ लोगों के लिए बना हूँ आज मात्र में चिन्ह ।
बहुलायास प्रचार सर्वदा जिसके लिए अखिन्न ।
यदि उतार देते कागज से पुन: सरोवर बीच ।
तो लगता संस्कृति की जड़ को पुन: रहे हो सींच ।। 28 ।।

नहीं विकास सुनिश्चित करती अपरिमेय भी धातु ।
विविध रसायन नहीं बना सकते हैं वह जीवातु ।
पावन सुन्दर और शुभद का कर सकते क्या मोल ।
भले बजाते रहो अर्थ के बहु प्रसार का ढोल ।। 29 ।।

महापुरुष चरणों में शोभित पद्म पताका मीन ।
पर इनको तलवों के नीचे लाना सुमति विहीन।
क्या आ सकती इस उद्यम से महापुरुषता मित्र ।
सवभूताहत हतु समुद्यम जिनका प्रकृत चारत्र ।।30 ।।

श्री हो सकती नहीं बंदिनी सुरभि नहीं अवरूद्ध ।
वैयक्तिक अधिकार जताना इनपर नियम विरूद्ध ।
कलुषित भू से नहीं समुत्थित हो सकता शुभहास ।
खोजा अब तक नहीं गया है सोना सहित सुबास ।। 31 ।।

नियम अटल है यहाँ प्रकृति का छीन रहे जो हास।
उनका जीवन भी न कभी भी रह पाता मधुमास ।
प्रतिबिंबन अक्षम जो करते जीवन को हैं नित्य ।
प्रति बिंबन अक्षम वे करते निज जीवन को नित्य ।। 32 ।।

लक्ष्मी दास बना नर फिर क्यों श्री का प्रिय आवास ।
होते यहाँ विनष्ट देखता हो तटस्थ सायास ।
स्वयं सृष्टि कर्ता चतुरानन मुझ पर थे आसीन ।
उसे आज सामान्य मनुज ने बना दिया है दीन ।। 33 ।।

श्री शुचिता सत्कीर्ति दिव्यता का जो रहा प्रतीक ।
उस सरोज का मान सिद्ध हो जाता आज अलीक ।
जब ये गुण ही नहीं रहे है आज लोक को मान्य ।
तो ज्ञापक भी समझा जाए क्यों मानार्ह वदान्य ।। 34 ।।

योगी नहीं कि बिखरा पाऊं संकट में भी हास ।
अक्षय पात्र नहीं बिखराऊं संतत यहाँ सुबास ।
विषपायी भी नहीं झेल जो जाऊं गरल प्रसार ।
धरा नहीं जो मैं सह पाऊं कदाचरण का भार ।। 35 ।।

सीमित साधन और सभी कुछ रहते भी प्रतिकूल ।
तुम कहते हो हंसो क्योंकि तुम भारत के हो फूल ।
हास प्रयास जन्य क्या होता स्वत: स्फूर्त अम्लान ।
फिर भी हूँ प्रयासरत रखकर तब आग्रह का ध्यान ।। 36।।

पंकवारि रवि अंशु और ईषत शीतल पवमान ।
निज अस्तित्व हेतु मैं तुमसे विकल मांगता दान ।
यद्यपि इन तत्वों के तुम भी अधिपति नहीं महान।
किन्तु छीन लेने का बल है इसका मुझको ज्ञान ।। 37 ।।

बनूं पुन: श्रीयुत शतदल में संतत सौरभ स्त्रोत ।
धृत अम्लान स्मिति अति मोहक शुभजल ओत प्रोत ।
धरे पंक फिर से पोषकता बहे सुमन्द समीर ।
और जगाए निज मृदु कर से रवि प्रतिप्रात अधीर ।। 38 ।।

मुझे स्वयं हरिनाभि समुत्थित होने पर है गर्व ।
अयुत वर्ष से मिलता आया मुझको मान अखर्व ।
अधुनातन अपमान न करता मुझे अतीव निराश ।
मनुज चेतना पुन: जगेगी है इसका विश्वास ।। 39 ।।

दिनांक 05-03-2015

शिव कुमार मिश्र
अपर महाप्रबंधक/प्रशासन